आवश्यक निवेदन

यह द्रव्यप्रमाण-अनुगम षट्खण्डागम ग्रन्थका प्रथम खण्ड है। उसका द्वितीय अनुयोगद्वारा संख्या प्ररूपणा है । इस ग्रन्थकी प्रथम आवृत्तिका प्रकाशन सन १९३९ में अमरावती-कारंजा-आरा की हस्तलिखित प्रतियोंके आधारसे हुआ था ।

प्रसन्नता की बात है कि इस ग्रन्थके संशोधनके समय जीवराज जैन ग्रन्थमाला सोलापूर के माननीय मंत्री श्रीमान वालचंद देवचंद शाह मुंबई इनके सत्प्रयत्नसे मूल ताडपत्री ग्रन्थके फोटो प्रिंट उपलब्ध हुए । उनको एन्लार्ज भी करा लिया । साथ ही मेरे सहयोगी श्री. प. वालचंद शास्त्री और श्री. प्रो. जिनेन्द्रकुमार भोमाज इनको नियुक्त कर मुद्रित प्रतियोंको सामने रखकर उनके पाठभेद भी लिखवा लिये ।

जब जीवराज जैन ग्रन्थमालाने षट्खण्डागम धवला के अप्राप्य प्रथम छह भागोंका पुन: प्रकाशन का निर्णय कर उक्त पाठभेदोंके आधारसे उनके संशोधन का कार्य मुझपर सोपा गया, तब सत्प्ररूपणा प्रथम पुस्तक का संशोधन करते समय मुझे यह अनुभव हुआ की केवल इन पाठभेदोंके आधारसे इनका संशोधन करना पर्याप्त न होगा । क्योंकि मुद्रित प्रतीमें ऐसे प्रचुर स्थल संदेहास्पद रह जाते है, जिनकेलिये फोटो प्रिंटसे मिलान करना आवश्यक होगा । जब मैने यह दृष्टिकोण संस्थाके मंत्री महोदय के सामने रखा; तब उन्होंने डॉ. ए. एन्. उपाध्ये जीसे परामर्ष कर फोटो प्रिंटसे मिलानकी सब व्यवस्था करते हुये स्व. पं. चंद्रराज शास्त्रीको इस कार्यमें सहायता करनेके लिये नियुक्त किया ।

षट्खण्डागम धवला और कषाय प्राभृत जयधवला-की ताडपत्रीय सब प्रतियां हळे कानडी लिपिमें लिपिबध्द थी । स्व. श्री. पं. चंद्रराज शास्त्रीको इस लिपीको पढनेका अच्छा अभ्यास था । वे बडी सुगमतासे इन्हें पढते थे । अत: उनकी सहायतासे शंकास्पद स्थलोंको ठीक करनेमें बडी सहायता मिली । अब स्वं. पं. चंद्रराजशास्त्री हमारे बीच नहीं है । असमयमें उनका वियोग एक अनहोनी घटना हुई । जबतक यह संशोधनका कार्य चलेगा तबतक उनकी याद बराबर आती रहेगी ।

मूडबिद्रीमें षट्खण्डागम धवलाकी ताडपत्रीय तीन प्रतियां है। उनमेंसे एक प्रत अधुरी प्रतीत होती है। शेष दो प्रतियां पूर्ण है। बीचबीचमें उनके भी अनेक पत्र नष्ट हो गये है। कहीं कहीं एकादा वाक्य वा कुछ अक्षर त्रुटित हो गये है। फिर भी उक्त दोनों प्रतियोंके फोटो प्रिंटके आधारसे ग्रन्थके संदर्भ मिलानेमें कठिनाई नहीं आई। ऐसे कुछ ही स्थल शेष रहते है भुटित रह जाते है। मैने यह अपना अनुभव प्रथम और द्वितीय पुस्तकका संशोधन करते समय आये हुए अनुभव के आधारसे लिखा है। संभव है कि आगे ऐसे कुछ स्थल भी हो जो सब प्रतियोंमें न होनेसे उपलब्ध न किये जा सके।

इन तीन प्रतियोंमेंसे एकका संक्ते अक्षर 'अ' है। सूचित होता है कि यह प्रत सबसे प्राचीन होगी। क्योंकि अन्य दो प्रतियोंमें उद्धृत रूपसे जो कतिपय अधिक गाथाएं पाई जाती है, वे इसमें नहीं है। शेष दो प्रतियाँ उसके बाद लिपिबध्द की गई जान पडती है। उनमेंसे खंडित प्रतिका संक्ते अक्षर 'क' है। और तीसरी पूर्ण प्रतिका संक्ते अक्षर 'ब' है।

प्रथम संस्करणसे इस द्वितीय संस्करणमें पाठभेदोंकी दृष्टिसे पर्याप्त संशोधन हुआ है। यद्यपि इस संस्करणमें जहाँ जहाँ पाठोंका संशोधन किया गया उन संशोधित पाठोंका मूलमें स्वीकार कर प्रथम संस्करणसे पाठोंका (मुद्रित) 'मु' इस संक्ते अक्षरके साथ पाद टिप्पणियोंमें दे दिया है।

तथापि संशोधन की विशेषता का ज्ञान करानेके अभिप्रायसे कुछ उपयोगी संशोधित पाठभेदकी मालिका परिशिष्टमें निर्दिष्ट की गई है।

जो कतिपय महत्वके पाठभेद है, उनका परिशिष्टमें निर्देश किया हैं। इनमेंसे कतिपय पाठभेदोंको ध्यानमें रखकर अर्थभी योग्य परिवर्तन किया गया है। इससे समग्र ग्रंथ लगभग संशोधित शुध्द हो गया है।

पंचनमस्कार स्वरूप प्रथम मंगलसूत्र प्रात:स्मरणीय भगवान् आचार्य पुष्पदंतकी अमर कृति हैं। वह सर्वार्थ साधक है।

इस संस्करणके प्रूफ संशोधनका पूरा भार श्री. पं. नरेन्द्रकुमार भिसीकर (न्यायतीर्थ) सोलापूर इनके उपर है। वे सरल स्वभावी-व्युत्पन्न और तत्त्वनिष्ठ विद्वान है। उन्होंने इस कार्यको अच्छी तरह सम्पन्न किया है। इसके लिये मैं उनका विशेष आभारी हूँ।

श्रीयुत पं. हिरालालजी सिध्दांत शास्त्री का षटखण्डागम धवलाके संपादनमें प्रारंभमें पूरा सहयोग रहा है। उन्होंने कषाय प्राभृत चूर्णि, पंचसंग्रह आदि अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थोंका संपादन किया है। वे अनुभवी विद्वान है। उनके सहयोगके लिये मैं उनका आभारी हूं।

श्रीमान् स्व. डॉ. हिरालालजी जैन तथा श्रीमान् स्व. डॉ. ए. एन. उपाध्ये ये जीवराज जैन ग्रंथमालाके प्रधान संपादक थे। उन दोनो विद्वानोंकी स्वीकृति पूर्वक ही मुझे यह कार्य सोपा गया था। एतदर्थ मैं उक्त सब विद्वानोंका आभारी हूँ। तथा वर्तमानमें ग्रन्थमालाके संपादक श्रीमान् पं. कैलासचंद्रजी सिध्दांतशास्त्री इन्होने अपना संपादकीय वक्तव्य देकर इस ग्रन्थकी महत्ता बढाई है। इसलिये उनका भी मैं आभारी हूँ।

इस कार्यके मूल प्रेरक श्रीमान वालचंद देवचंद शाह तो जीवराज जैन ग्रन्थमालाके प्राण ही है। अपनी वृद्धावस्थाकी चिंता न करते हुये वे निरलस भावसे जीवराज जैन ग्रन्थमाला सहित अनेक साहित्यिक तथा शैक्षणिक संस्थाओंकी सम्हाल करते है। उनकी ये सेवाएं सुवर्णाक्षरोंमें अंकित करने लायक है। वे दीर्घजीवी होकर इसी प्रकार धर्म और समाजकी सेवा करते रहे यह भावना रखते हुये मैं उनके यथासंभव पूरे सहयोगके लिये उनका भी आभारी हूँ।

इस संस्करणके मुद्रणका कार्य सुचारुरूपसे मेसर्स सन्मति मुद्रणालय, सोलापूरके संचालक तथा कर्मचारी गण इन्होंने अल्प अवधिमें सुंदर छपाईके साथ संपन्न किया है। इसलिये मैं उनका भी आभार मानता हूँ।

. . . इस संस्करणके संशोधनमें मैने अपनी पूरी प्रतिभाका उपयोग किया है। फिर भी प्रमादवश कहीं कोई त्रुटि रह गई हो तो विद्वान् पाठक उसे सुधारकर पढें, तथा हमें सूचित करें। यह नम्र निवेदन है।

निवेदक-

पं. फुलचंद सिध्दान्तशास्त्री